

অরথহীন লেখা

অরথহীন লেখা যার যাকো আছে অনেক কিছু। হ্যা, এই লেখার যাকোই আছে অনেক কিছু যেনে করো, এটা তোয়ার কাজে লাগবে, তাহলে তা লাগবে কাজে। নিজের ভাষায় লেখা দেখতে অভয়সত হও। যেনে রাখবে লেখা অরথহীন হয়, যখন তাকে অরথহীন যেনে করো; আর লেখা অরথবোধকতা করে, যখন তাতে অরথ ঢালো। যেকোনো লেখাই তোয়ার কাছে অরথবোধকতা করতে পারে, সেখানে অরথদযোতনা দেখতে পাও। ...ছিদ্রানবেষণ? না, তা হবে কেন?

যে কথাকে কাজে লাগাতে চাও, তাকে কাজে লাগানোর কথা চিন্তা করার আগে ভাবো, কি সেই কথার জাদুতে আচ্ছন্ন হয়ে গেছ কিনা। নিশ্চিত হও যে, কোনো মোহাচ্ছাদিত আবহে হয়ে অন্যের শেখানো আত্মসমর্থ করছো না, তাহলে নিরভয়ে, নিশ্চিনতে অগরসর হও। সেই কথাকে জানানো, বুঝো, আত্মসমর্থ করো; যেনে রাখবে, যা অনুসরণ করতে চলেছো, তা আগে অনুধাবন করা জরুরি; এখানে কিংকরতবষ হবার কোনো সুযোগ নেই।

কোনো কথা শোনাযাতরই কি তা বিশ্বাস করবে? হয়তো বলবে, করবে, হয়তো বলবে “করবো না।” হ্যা, “করবো না” বললেই অস্বীকার করা যায় না, হয়তো যনের গহীন গভীর থেকে ঠিকই বিশ্বাস করতে শুরু করেছে। সেই কথাটি, কিনতু মুখে অস্বীকার করছো। তাই সচেতন থাকো, কী ভাবছো- তারটি; সচেতন থাকো, কি আসলেই বিশ্বাস করতে চলেছো ঐ কথাটি... শুধু এতটুকু, যা-ই বিশ্বাস করো না কেন, আগে যাচাই করে নাও; আর এতে চাই তোয়ার।

তাই কোন কথাটি কাজে লাগবে, তা নিরধারণ করবে- হ্যা,। হয়তো সামান্য ক’টা বাংলা অকমর: খনড-ত, অনুসবার, বিঃসরণ কিংবা- কিনতু বিশ্বাস করো, তাহলে হয়তো তা দিয়েই করতে পারো এক উচ্চয়ারগীয়

*Sed quid est quod in hac causa maxime homines admirentur et reprehendant meum consilium, cum ego idem antea multa decreverim, quae magis ad hominis dignitatem quam ad rei publicae necessitatem pertinerent? Supplicationem quindecim dierum decrevi sententia mea. Rei publicae satis erat tot dierum quot C. Mario ; dis immortalibus non erat exigua eadem gratulatio quae ex maximis bellis. Ergo ille cumulus dierum hominis est dignitati tributus.*

*Excitavit hic ardor milites per municipia plurima, quae isdem conterminant, dispositos et castella, sed quisque serpentes latius pro viribus repellere moliens, nunc globis confertos, aliquotiens et dispersos multitudine superabatur ingenti, quae nata et educata inter editos recurvosque ambitus montium eos ut loca plana persultat et mollia, missilibus obvios eminus lacesens et ululatu truci perterrens.*

*Quam ob rem vita quidem talis fuit vel fortuna vel gloria, ut nihil posset accedere, moriendi autem sensum celeritas abstulit; quo de genere mortis difficile dictu est; quid homines suspicentur, videtis; hoc vere tamen licet dicere, P. Scipioni ex multis diebus, quos in vita celeberrimos laetissimosque viderit, illum diem clarissimum fuisse, cum senatu dimisso domum reductus ad vesperum est a patribus conscriptis, populo Romano, sociis et Latinis, pridie quam excessit e vita, ut ex tam alto dignitatis gradu ad superos videatur deos potius quam ad inferos pervenisse.*